भारत में मुस्लिम शिक्षा:अभाव और अल्प-विकास के ऐतिहासिक संदर्भ

डॉ. राहत हयात

सहायक प्रोफेसर, सीटीई, नूंह, मौलाना आजाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय, हैदराबाद

सार

वर्तमान पेपर की कल्पना और प्रारूपण भारत में मुसलमानों की शिक्षा के एक व्यापक कैनवास पर किया गया है। भारत में मुसलमानों की शिक्षा से संबंधित कोई भी सार्थक चर्चा केवल उनके ऐतिहासिक,सामाजिक और मनोवैज्ञानिक संदर्भों और इस संबंध में अर्थ निर्धारण पर विचार करके ही संभव हो सकती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि,वे सजातीय समुदाय नहीं हैं और ऊपर उल्लिखित सभी चिंताएं आपस में जुड़ी हुई हैं और एक-दूसरे पर प्रभाव डालती हैं। ये चिंताएं प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से एक ओर उनकी सुरक्षा,पहचान और स्वतंत्रता से संबंधित हैं,और दूसरी ओर,कमी,अभाव और विकास से संबंधित हैं। यही कारण है कि इसमें उनके स्थानिक-अस्थायी,धार्मिक,सांस्कृतिक और अस्तित्वगत निर्धारकों से संबंधित वास्तविकता भी शामिल है।

Keywords: Muslim education, Deficit, Deprivation, Higher Education

परिचय:

भारतीय मुसलमान ऐतिहासिक,भौगोलिक और सांस्कृतिक रूप से अपने सामाजिक-ऐतिहासिक संदर्भों के आधार पर अलग-अलग विशेषताओं के साथ एक विषम समूह हैं। वर्तमान पत्र में चर्चा को उनके ऐतिहासिक,राजनीतिक-आर्थिक और सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों में स्थापित करने का प्रयास किया गया है जो दोनों समुदायों के अपने इतिहास से प्रभावित हैं। इसलिए,मुसलमानों की एकरूपता से संबंधित बहस के लिए एक संक्षिप्त विवरण प्रदान करना आवश्यक हो जाता है,जिसे लेखक अन्यथा मानता है। यह भारत में मुसलमानों की शिक्षा को समझने के लिए एक स्पष्ट संदर्भ प्रदान करेगा।

अल्पसंख्यक अर्थात अंक का आकार

सभी अल्पसंख्यकों में से मुसलमान भारत में सबसे बड़े अल्पसंख्यक हैं। आमतौर पर,अल्पसंख्यक से संबंधित चर्चाएँ उनके अंकों के आकार के इर्द-गिर्द घूमती हैं। हालांकि,रीडिंग (एडवर्ड्स, 1981) अन्य सुझाव देती है,और इसे *'हीन या अधीनस्थ होने की स्थिति'* के रूप में संदर्भित करती है। इसका मतलब है कि अंकों के आकार पर विचार करना उचित आधार नहीं है जिस पर कि अल्पसंख्यक शब्द टिका हुआ है। वास्तव में,यह राज्य कल्याण योजनाओं के लाभों का सुचारू प्रवाह है जो उनके उत्थान के लिए

समुदाय तक पहुँचता है जो 'अल्पसंख्यक' स्थिति को निर्धारित करता है। यही कारण है कि दक्षिण अफ्रीका में अश्वेतों के बड़े अंकों का आकार अल्पसंख्यक है न कि गोरों का कम अंकों का आकार।

गैर-सजातीय समुदाय

मुसलमानों से संबंधित एक और आम गलतफहमी यह है कि अधिकांश लोग उन्हें एक सजातीय समुदाय मानते हैं। यह अक्सर उन्हें भारत में मुसलमानों की शैक्षिक स्थिति का निष्पक्ष रूप से विश्लेषण करने में विफल करता है। वास्तव में, मुसलमान अखंड सांस्कृतिक और पारंपरिक विशेषताओं का गठन नहीं करते हैं,बल्कि वे दूसरों की तरह ही उतने ही विषम हैं और विभिन्न संप्रदायों और विचारों के विभिन्न स्कूलों के साथ विविध हैं और भारत में किसी भी अन्य समुदाय की तरह एक अपरिवर्तनीय विश्वास प्रणाली और जीवन के तरीकों को साझा करते हैं। इस प्रकार,वे भी दूसरों की तरह ही खंडित और'जाति-ग्रस्त'हैं। इस प्रकार हम भारतीय मुसलमानों के बीच भेदभाव का एक मजबूत आधार देखते हैं। सामाजिक स्तरीकरण के साथ-साथ इस तरह के अंतर उनकी आर्थिक स्थिति में भी परिलक्षित होते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि वास्तव में वे न तो हिंदू जाति व्यवस्था से मिलते-जुलते हैं और न ही पश्चिमी वर्ग व्यवस्था से;बल्कि अपनी विविध जातीयता और विभिन्न धार्मिक विचारधाराओं के माध्यम से स्पष्ट सीमाएँ खींचते हैं। घोष और नाथ (1996)ने उन्नीसवीं शताब्दी की शुरुआत में मुसलमानों के बीच अस्सी जातियों और सामाजिक स्तर के तीन समूहों का उल्लेख किया है। तीन व्यापक समूहों में अशरफ(उच्च जाति के मुसलमान)अजलाफ (निचली जाति के मुसलमान)और अरजल शामिल थे। पहले समूह में सैयद,शेख, पठान और मुगल शामिल हैं। अजलाफ को'स्वच्छ'और'अशुद्ध'श्रेणियों'में विभाजित किया गया है।'स्वच्छ' श्रेणियों में कारीगर और अन्य पेशेवर लोग शामिल थे,जबकि'अशुद्ध'में अन्य लोगों के साथ-साथ मैला ढोने वाले भी शामिल थे। अरज़लों को हिंदू दलितों के बराबर माना जाता है। बिहार में हाल ही में की गई जातिगत जनगणना भी मुसलमानों की कई जातियों और उप-जातियों को दर्शाती है। तथ्य यह है कि अधिकांश भारतीय मुसलमान'अछूत'और'निम्न' जाति के धर्मांतरित लोगों के वंशज हैं,जिनमें से केवल एक छोटे से अल्पसंख्यक की उत्पत्ति अरब,ईरानी और मध्य एशियाई बसने वालों से हुई है। मुसलमान,जो विदेशी मूल के होने का दावा करते हैं,वे खुद को अशरफ या कुलीन के रूप में उच्च दर्जा देते हैं। इस वर्गीकरण के अनुसार,भारत की 75% मुस्लिम आबादी अजलाफ श्रेणी में आती है। मुस्लिम,अर्थात् सैयद,शेख,पठान और मुगल, कसाई (कसाई)फकीर(भिखारी)और दफाली के अलावा अखिल भारतीय स्तर पर वितरित किए जाते हैं,जबकि अन्य समुदायों को क्षेत्रीय स्तर पर अलग-अलग वितरित किया जाता है।

दो प्रमुख विभाग: शिया और सुन्नी

इनके अलावा,मुसलमानों के बीच दो मुख्य विभाजन सुन्नी और शिया हैं। शिया का नाम अरबी शब्द शाह से लिया गया है, जिसका अर्थ है'पार्टी'या'समर्थक',और हजरत अली-चौथे और अंतिम खलीफा के समर्थकों को संदर्भित करता है। शिया पैगंबर मुहम्मद से वंश की दिव्य रेखा के माध्यम से अपने इमामों के आध्यात्मिक अधिकार और अचूकता में विश्वास करते हैं। वे अहल-अल-बैत के उद्देश्य और व्यक्तियों के प्रति भावनात्मक समर्पण आकर्षित करते हैं। वर्षों से शियाओं को विभिन्न समूहों में विभाजित

किया गया है,हालांकि उनमें से कई अल्पकालिक साबित हुए हैं। शियाओं में सबसे बड़े समूह बारह-इस्ना अशरी या जाफरी हैं, इसके बाद इस्माइल और जायदी हैं। नब्बे प्रतिशत शिया बारह इमामों में विश्वास करते हैं। इस्माइल पहले सात इमामों में विश्वास करते हैं,जबकि जायदी पहले पांच इमामों को मुहम्मद के सही उत्तराधिकारी के रूप में मानते हैं। शियाओं के बीच सैयद (पैगंबर मुहम्मद के वंशज) स्वयं कई उप-समूहों जैसे आबिदी,हसनी,हुसैनी,जैदी और रिज़वी में विभाजित हैं। सुन्नी इन उपखंडों का पालन नहीं करते हैं और हमेशा सैयद को अपने उपनाम के रूप में उपयोग करते हैं।

सुन्नी इस्लाम शब्द अहल-अल-सुन्नाह वल-जामा का एक छोटा रूप है। वे पैगंबर मुहम्मद की परंपराओं (सुन्नत) को आधिकारिक मानते हैं और मुहम्मद के पहले चार उत्तराधिकारियों के समग्र क्रम को स्वीकार करते हैं (अबू बकर,उमर,उस्मान और अली)।अनुष्ठानों और कानूनों में अंतर सुन्नी को चार रूढ़िवादी और परंपराबादी विचारधाराओं के अनुयायियों में विभाजित करता है: हनफी,मलिकी,शाफई और हम्बली। इनके अलावा,कई अन्य विशेषताएं हैं जो एक मुस्लिम समूह को दूसरे से अलग करती हैं,यहां तक कि प्रमुख सुन्नी समूह के भीतर भी,उदाहरण के लिए,कानून के स्कूल (हनफी,मलिकी,शाफई और हम्बली) के आधार पर रहस्यवाद (सूफीवाद)और निरंतरता पर उनकी स्थिति पर ध्यान दिया जाता है।

मुस्लिम समुदायों की सामाजिक स्थिति:

मुस्लिम समुदायों की सामाजिक स्थिति,उनकी स्व-कथित स्थिति और दूसरों द्वारा महसूस की जाने वाली स्थिति के संदर्भ में वर्गीकृत की जा सकती है।सैयद के मामले में 'उच्च-उच्च' के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। मुगल के मामले में'उच्च'के संदर्भ में वर्गीकृत किया जा सकता है। शेख,पठान,नक्कल,राजपूत,मेव,घोसी,गद्दी,पंजाबी,मुस्लिम सौदागर और अरीन के मामले में'मध्यम-माध्यम'के संदर्भ में वर्गीकृत किया जा सकता है।'मध्य-निम्न'श्रेणी में अब्बासी,भिश्ती,सक्का,मिरासी,कसाई,फकीर और तेली शामिल हैं। और'निम्न-निम्न'में नलबंद,मच्ची,कनमेलिया,कलंदर और दफाली हैं।

इस प्रकार,मुसलमानों के बीच विभिन्न समुदायों में सामाजिक पदानुक्रम भी स्पष्ट है,जिसमें ऊपर की ओर गतिशीलता के लिए एक मजबूत आग्रह है। यह स्वभाव से ईश्वरशासित से अधिक सांस्कृतिक है। अधिकांश मुसलमानों के पास अपने वंश,अनुष्ठानों और रीति-रिवाजों के संबंध में श्रेष्ठता की हवा थी। सभी मुस्लिम समुदायों में संप्रदायों,वंश,पारिवारिक सम्मान, सामाजिक-आर्थिक संरचना, अमल-ए-सालेह (गुणों का कार्य)और पेशाह (व्यवसाय)हज और ज़ियारत(पवित्र तीर्थों की तीर्थयात्रा)के आधार पर सामाजिक भेदभाव और सामाजिक विभाजन मौजूद हैं।

इस प्रकार,मुसलमानों को एक सजातीय समुदाय मान कर विश्लेषण करने से विश्लेषण विकृत और खंडित विश्लेषण होगा। इसके अलावा,जाति आयामों पर आधारित अखिल भारतीय सर्वेक्षण की कमी के कारण (क्योंकि अल्पसंख्यक शब्द सामाजिक बातचीत की तुलना में अधिक राजनीतिक शब्दावली का गठन करता है)किसी भी शोधकर्ता के लिए मुस्लिम समुदाय की शिक्षा पर वस्तुनिष्ठ विश्लेषणात्मक समझ के साथ सामने आना बहुत मुश्किल है। इस तरह के आंकड़ों की अनुपस्थिति में,किसी को मुसलमानों के संदर्भ में पहले से उपलब्ध उपलब्ध आंकड़ों पर भरोसा करना होगा।

अल्पसंख्यक: सामाजिक वार्तालापों की तुलना में राजनीतिक शब्दावली का हिस्सा

भारत में 'अल्पसंख्यक' शब्द शुरू से ही सामाजिक बातचीत के बजाय राजनीतिक शब्दावली का हिस्सा रहा है। इस बात के सबूत हैं कि राजनीतिक और आर्थिक अधिकारों के लिए सुरक्षा उपाय और मुसलमानों के संदर्भ में सुरक्षा उपायों के कार्यान्वयन की निगरानी के लिए विशेष अधिकारियों के प्रावधान को मई और अक्टूबर 1949 में स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद वापस ले लिया गया था। हालांकि, एक आश्वासन दिया गया था कि संवैधानिक सुरक्षा के अभाव में भी अल्पसंख्यकों को सार्वजनिक भागीदारी और प्रतिनिधित्व में उचित सौदा मिलेगा। ये वादे कभी पूरे नहीं हुए। इसके अलावा, अहमद (1973) और अली (2001) स्वीकार करते हैं कि मुसलमानों के बीच ऐसी भेदभावपूर्ण प्रथाएँ दक्षिण भारत की तुलना में उत्तर भारत में अधिक देखी जाती रही हैं।

शिक्षा से संबंधित अभाव के परिणामस्वरूप, मुस्लिम समुदाय देश के शैक्षिक विकास के साथ उस तरह से तालमेल नहीं रख पाया है जिस तरह से अन्य अल्पसंख्यकों (ईसाई, पारसी, सिख, बौद्ध, जैन) ने अपना विकास किया है। यहूदियों और पारसियों के मामले में, साक्षरता पूरे भारतीय समाज की तुलना में अधिक है (चौहान, 1990)। इसलिए, मुसलमानों के लिए आधुनिक शिक्षा के साथ तालमेल नहीं बिठा पाने का विश्लेषण तभी किया जा सकता है जब उनके ऐतिहासिक और सामाजिक-आर्थिक संदर्भों को सामने लाया जाए। इससे इस संबंध में व्यापक समझ उपलब्ध होगी। इसलिए, मुसलमानों की शैक्षिक स्थितियों को समझने का प्रयास करते समय ऐतिहासिक, राजनीतिक-आर्थिक और सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ को देखना महत्वपूर्ण है।

मुस्लिम शिक्षा, मदरसा शिक्षा के संदर्भ में:

भारत में मुसलमानों के आगमन के साथ, मस्जिद, मदरसा और मकतब को आमतौर पर 'व्याख्यान' और 'चर्चा' विधियों के माध्यम से कुरान और हदियात शिक्षा के लिए सीखने के केंद्र के रूप में विकसित किया गया था। प्रारंभ में, मदरसों में शिक्षा स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप प्रदान की जाती थी। भारत में मध्ययुगीन काल के दौरान, मदरसों ने धार्मिक और तत्कालीन उपलब्ध वैज्ञानिक ज्ञान प्रदान किया, जिसे 'उलूम-ए-अकलियाह' (बौद्धिक ज्ञान) कहा जाता है। इसे राजाओं, नवाबों और जागीरदारों (सामंतों) और समुदाय की प्रभावशाली महिलाओं का संरक्षण प्राप्त था। सुल्तान सिकंदर लोधी ने धार्मिक शिक्षा के अलावा तर्कसंगतता पर भी जोर दिया। मुगल सम्राट अकबर ने प्राथमिक विद्यालय के पाठ्यक्रम में सुधारों की शुरुआत की। सुधारों के परिणामस्वरूप, प्राथमिक विद्यालय के पाठ्यक्रम में तर्क, अंकगणित, नैतिक, क्षेत्रमिति, ज्यामिति, खगोल विज्ञान, कृषि, शरीर विज्ञान, व्याकरण, कहानियाँ, दर्शन, भाषा और साहित्य, पारंपरिक विज्ञान, पत्र लेखन, सुलेख, इतिहास और सार्वजनिक प्रशासन शामिल थे। संस्कृत का अध्ययन करते समय छात्रों के अध्ययन के क्रम में व्याकरण, नयाई, वेदांत और पतंजलि का अध्ययन करना चाहिए। दार्शनिक, गणितज्ञ और वैज्ञानिक हकीम फतुल्लाह सिराज़ी ने अपने अनुयायियों के साथ मिलकर इस प्रणाली में महत्वपूर्ण भूमिका का दावा किया। इस प्रणाली को बाद में मुल्ला निज़ामुद्दीन द्वारा एक पाठ्यक्रम के रूप में विकसित किया गया और इसे "दर्स-ए-निज़ामी" के रूप में जाना जाने लगा और अब तक लगभग सभी मदरसों में इसका पालन किया जाता है। इस प्रकार, जिसे दर्स-ए-निज़ामिया (पाठ्यचर्या) के रूप में जाना जाता है, उसने उस समय के धार्मिक और प्राकृतिक विज्ञान दोनों को

संश्लेषित किया। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य ऐसे उलमा या विद्वान को प्रशिक्षित करना था जो सिविल सेवा के लिए योग्य हो जाएं, साथ ही न्यायाधीश या क़ादी के रूप में कर्तव्यों का पालन करें।

मुसलमानों की शिक्षा पर ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रभाव:

मुगल शासन के पतन और ब्रिटिश शासन की स्थापना के साथ, उच्च शिक्षा के केंद्रों का बहुत तेजी से पतन हुआ और इन्हें आधुनिक ज्ञान को विकसित करने और आत्मसात करने के लिए सीमित संसाधनों के साथ दया पर छोड़ दिया गया। ईस्ट इंडियन कंपनी ने अपने लिए काम करने के लिए प्रशासनिक अधिकारियों की आवश्यकता के कारण शिक्षा प्रणाली में बदलाव लाने की कोशिश की। उन्होंने बंगाल से परिवर्तन लाना शुरू किया। फलस्वरूप यह पूरे देश में फैल गया। जब, 1837 में, अंग्रेजों द्वारा फ़ारसी को आधिकारिक भाषा के रूप में अंग्रेजी से बदल दिया गया, तो मदरसों का ध्यान केवल धार्मिक शिक्षा पर केंद्रित हो गया। भारत में मदरसा आयोजकों ने बदलते परिवेश में अपने पाठ्यक्रम की प्रासंगिकता पर विचार नहीं किया। बल्कि, तर्कसंगत विज्ञान की अनदेखी करते हुए, इस्लाम के धार्मिक पहलुओं पर अधिक जोर दिया (जाफरी, सैयद नकी हुसैन, 2006)। इस्लामी शिक्षा की मजबूत तर्कवादी परंपरा के बावजूद, भारत में मदरसे, तेजी से बदलते सामाजिक और शैक्षणिक माहौल के साथ तालमेल बिठाने में विफल रहे। इस प्रकार, आधुनिक औपनिवेशिक शिक्षा प्रणाली की शुरुआत से ही मुसलमान दूसरे समुदाय से पिछड़ गए।

मुस्लिम शासन के विघटन, अंग्रेजों के आगमन और आधुनिक शिक्षा की शुरूआत के साथ मदरसा शिक्षा को एक बड़ा झटका लगा। इसलिए, मदरसा शिक्षक बेचैन हो गए और उन्होंने मुसलमानों के लिए धर्म-केंद्रित शिक्षा के प्रति अधिक कठोर रवैया विकसित किया। ब्रिटिश शासन के खिलाफ 1857 के विद्रोह में मदरसा नेताओं की ऐतिहासिक भागीदारी ने साबित कर दिया कि पारंपरिक इस्लामी शिक्षा का मुख्य उद्देश्य भारतीय मुसलमानों को राजनीतिक सत्ता हासिल करने की आकांक्षा के साथ जोड़ना था। उलेमा द्वारा विद्रोह में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के कारण, अंग्रेजों को मदरसा पर असहमति के संभावित केंद्र के रूप में संदेह होने लगा और इसलिए, ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन ने सिविल सेवाओं में मदरसा स्नातकों के रोजगार को समाप्त कर दिया।

1857 के विद्रोह के बाद मुस्लिम शिक्षा का विकास:

1857 के विद्रोह की विफलता के बाद, मुस्लिम उलेमा को डर था कि अंग्रेजों द्वारा शुरू की गई पश्चिमी शिक्षा के कारण मुस्लिम जीवन शैली कमजोर हो सकती है। उनकी तत्काल आवश्यकता अपने समुदाय के आधुनिक शिक्षा की ओर बढ़ने की संभावना पर नज़र रखने और यह सुनिश्चित करने की थी कि वे फ़ारसी-अरब विरासत को आगे बढ़ाएँ, जो केवल मदरसा शिक्षा के माध्यम से ही संभव था। इस प्रकार, 19वीं सदी में मुस्लिम बुद्धिजीवी मदरसों में पढ़ाए जाने वाले पाठ्यक्रम के प्रति सचेत हो गए। शिक्षा में क्रांति लाने के लिए कुछ नये मदरसे खोले गये। मुगल काल के बाद, उत्तर भारत में इस्लामी शिक्षा की सबसे बड़ी संस्था 'दारुल उलूम' देवबंद अस्तित्व में आई थी, जिसे 1866 में हाजी मुहम्मद आबिद हुसैन ने यूपी के सहारनपुर में खोला था। 'नदवतुल उलेमा' धार्मिक और वैज्ञानिक शिक्षा के साथ-साथ तकनीकी शिक्षा प्रदान करने के लिए 1894 में खोला गया था। इन मदरसों ने सरकारी समर्थन स्वीकार नहीं किया ताकि संस्था के आंतरिक प्रशासन और पाठ्यक्रम में हस्तक्षेप से बचा जा सके। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अस्तित्व में आने और राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन शुरू होने से बहुत पहले वे उत्तर भारतीय मुसलमानों के लिए

बड़े संकट के दौर में अस्तित्व में आए, जब वे ब्रिटिश क्रोध का सामना कर रहे थे और उलेमा ब्रिटिश विरोधी संघर्ष में सबसे आगे थे। मौलाना महमूदुल हसन के नेतृत्व में उलेमाओं ने आधुनिक शिक्षा का विरोध इसलिए नहीं किया क्योंकि यह आधुनिक और धर्मनिरपेक्ष थी, बल्कि इसलिए अधिक विरोध किया क्योंकि यह ब्रिटिश साम्राज्यवादी व्यवस्था के तहत थी।

धार्मिक और भाषाई पहचान के साथ मदरसा शिक्षा का विकास:

उलेमा अपनी धार्मिक और भाषाई पहचान को लेकर अधिक चिंतित थे। इसलिए, मदरसा शिक्षा उनके संरक्षण में फली-फूली। निम्न हिंदू जातियों से धर्मांतरण के परिणामस्वरूप मुसलमानों में भयावह गरीबी के कारण, मदरसा शिक्षा उनके लिए सबसे उपयुक्त थी क्योंकि यह मुफ्त भोजन, कपड़ा प्रदान करती थी और उनके लिए आसानी से उपलब्ध थी। दूसरी ओर, आधुनिक पश्चिमी औपनिवेशिक शिक्षा न तो उनके लिए प्रासंगिक थी और न ही वे अपनी अत्यधिक गरीबी के कारण इसे वहन कर सकते थे। इस प्रकार, उलेमा ने धार्मिक शिक्षा के लिए मुफ्त मदरसे उपलब्ध कराकर गरीब वर्गों की मदद की। हालाँकि, मदरसा शिक्षा अपने इस्लामी पाठ्यक्रम के साथ अपने छात्रों को सांसारिक शिक्षा के प्रति एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण विकसित करने में विफल रही जो उन्हें बेहतर व्यावसायिक अवसर प्रदान कर सकती थी और समकालीन वैश्विक वातावरण के संदर्भ में जीवन को देख सकती थी। शिक्षा के माध्यम के रूप में उर्दू के प्रति जुनून, नौकरी के अवसरों के मामले में अपने छात्रों को देश के अन्य आधुनिक शिक्षित छात्रों के बराबर लाने में विफल रहा। इस प्रकार, मदरसा शिक्षा कभी भी नौकरी की संभावनाओं के संदर्भ में शिक्षा प्रदान करने के लिए इच्छुक नहीं रही। मदरसे से निकले हजारों स्नातकों ने पिछले कुछ वर्षों में बड़ी संख्या में मदरसों की स्थापना की, लेकिन आधुनिक शिक्षा की तुलना में अपने छात्रों को भौतिक प्रगति का कोई अवसर नहीं दिया। इस प्रकार, उनके छात्रों को शिक्षा की उपयोगितावादी अवधारणा का कोई भी लाभ लेने से रोका गया। उनके नौकरी के अवसर इमाम के रूप में मस्जिदों और मदरसों में कम वेतन वाले शिक्षक के रूप में सीमित रहे। यहां तक कि उच्च इस्लामी अध्ययन के लिए, भारत में अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, जामिया मिलिया इस्लामिया और मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय के कुछ विभागों को छोड़कर, मदरसों द्वारा दी जाने वाली डिग्रियों को अभी भी भारतीय विश्वविद्यालयों द्वारा व्यापक रूप से मान्यता नहीं दी जाती है। इसी तरह, ऐसी डिग्रियाँ सरकार में प्रशासनिक नौकरियों के लिए मान्यता प्राप्त नहीं हैं। यह शिक्षा की उपयोगितावादी अवधारणा की ओर अवसर प्राप्त करने के मामले में उन्हें और पीछे ले जाता है।

मुसलमानों के शैक्षिक इतिहास में महत्वपूर्ण मोड़:

सर सैयद अहमद खान ने इस विरोधाभास को पहचानते हुए मुसलमानों की सोच को बदलने का गंभीर प्रयास किया। 1875 में, उन्होंने अलीगढ़ में मोहम्मडन एंग्लो ओरिएंटल कॉलेज के नाम से जाना जाने वाला पहला आधुनिक शैक्षणिक संस्थान स्थापित किया, जो लोकप्रिय रूप से अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के नाम से जाना जाता है [कादरी, ए.डब्ल्यू.बी. (संस्करण), (1998)। आजादी के बाद से भारत में शिक्षा और मुसलमान, दिल्ली: इंस्टीट्यूट ऑफ ऑब्जेक्टिव स्टडीज, पी। 81.]. यह मुसलमानों के शैक्षिक इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ था। हालाँकि, इस समय तक मुसलमानों की एक पूरी पीढ़ी शिक्षा में पिछड़ चुकी थी। इसलिए, 1904 तक मुस्लिम नामांकन की वृद्धि दर अन्य समुदायों की तुलना में बहुत धीमी थी।

इसी तरह, 1920 में, जामिया मिलिया इस्लामिया की स्थापना दारुल उलूम देवबंद के तत्कालीन प्रिंसिपल महमूद-अल-हसन ने की थी, जब अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय असहयोग खिलाफत की अवधि के दौरान छात्रों और विद्वान बुद्धिजीवियों की मांग को पूरा करने में विफल रहा था। आंदोलन। इस विश्वविद्यालय की स्थापना का मूल उद्देश्य सरकारी हस्तक्षेप से मुक्त रहकर राष्ट्रीय एजेंडा, इस्लामी परंपरा और संस्कृति तथा आधुनिक शिक्षा पर आधारित एक संस्थान की स्थापना करना था। चूंकि विश्वविद्यालय राष्ट्रवादियों द्वारा खोला गया था, इसलिए ब्रिटिश साम्राज्यवादी व्यवस्था का विरोध करने के कारणों से आधुनिक शिक्षा का विरोध किया गया। हालाँकि, 1905-1947 के दौरान, शैक्षणिक संस्थानों में सभी स्तरों पर मुसलमानों का नामांकन लगातार बढ़ता गया।

उनके नामांकन के संबंध में विवरण नीचे दी गई तालिका में देखा जा सकता है (तालिका 1.1 देखें)। यह इंगित करता है कि 1906-07 में स्कूल स्तर पर मुसलमानों का कुल नामांकन 8.93 लाख था, जबकि उच्च शिक्षा स्तर (सामान्य और व्यावसायिक संयुक्त) पर 2040 था। 1931-32 तक, स्कूल स्तर पर मुस्लिम छात्रों की कुल संख्या बढ़ गई थी 30.17 लाख और उच्च स्तर (सामान्य और पेशेवर संयुक्त) से 12,402। हालाँकि, कुल नामांकन के प्रतिशत के रूप में यह 1% से भी कम था। 1931-32 के बाद देश के धर्मनिरपेक्ष ताने-बाने को बनाए रखने के लिए ऐसे सांख्यिकीय आंकड़े एकत्र नहीं किए गए। हालाँकि, डेटा न होना शोधकर्ता और शिक्षा जगत के लिए एक स्पष्ट क्षति है।

ब्रिटिश भारत में मुसलमानों ने अन्य धार्मिक समुदायों की तुलना में बहुत बाद में पश्चिमी शिक्षा प्रणाली को अपनाया। अतः ब्रिटिश काल से ही मुसलमानों का शैक्षिक पतन प्रारम्भ हो गया। प्रारंभ में वे ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली को इस डर से स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे कि अंग्रेजी भाषा और पश्चिमी विज्ञान उन्हें धर्म परिवर्तन के लिए मजबूर कर देंगे। ऐसा डर इस तथ्य से भी स्पष्ट होता है कि जब 1835 में सरकार ने अपना धन विशेष रूप से अंग्रेजी शिक्षा पर खर्च करने का निर्णय लिया, तो मौलवियों और देशी सज्जनों सहित कलकत्ता के मुसलमानों के लगभग 8000 लोगों ने अंग्रेजी शिक्षा के खिलाफ एक याचिका पर हस्ताक्षर किए। सामान्य सिद्धांतों पर इस पर आपत्ति जताने के बाद उन्होंने कहा कि 'सरकार का स्पष्ट उद्देश्य मूल निवासियों का धर्मांतरण है।'

मुसलमानों के मन में धर्म परिवर्तन का ऐसा डर अन्य धार्मिक समुदाय के आत्मविश्वास के बिल्कुल विपरीत है, जिन्होंने न केवल अंग्रेजी शिक्षा के लिए पहल की, बल्कि उन्होंने अपने धर्म और अपने आकाओं के बीच एक मिलन स्थल खोजने का प्रयास किया।

निष्कर्ष:

विभाजन के बाद का समय भी भारत में मुसलमानों के लिए संकट से भरा रहा। शिक्षित और अमीर मध्यम वर्ग गरीब अशिक्षित जनता को छोड़कर पाकिस्तान चले गए। इस प्रकार, गरीब अशिक्षित जनता के लिए मदरसा शिक्षा ने उनकी मनोवैज्ञानिक और बौद्धिक आवश्यकता को पूरा किया। दूसरी ओर, इस अवधि के दौरान, सरकारी प्राथमिक विद्यालयों की संख्या आर्थिक रूप से वंचितों के लिए स्कूली शिक्षा की आवश्यकता को पूरा करने में अक्षम थी। यहां तक कि जो लोग किसी तरह सरकारी स्कूलों में नामांकित थे, उन्होंने भी प्राथमिक शिक्षा पूरी करने से पहले ही पढ़ाई छोड़ दी। ऐसा इसलिए था क्योंकि गरीबी के कारण उनके माता-पिता परिवार की आय बढ़ाने के लिए बच्चों को काम पर भेजने के लिए मजबूर हो गए थे। इस प्रकार, वे सुबह जल्दी या देर

शाम चलने वाले सुविधाजनक समय के कारण मदरसा शिक्षा जारी रखते हैं। इस प्रकार, यह विश्लेषण कि मुसलमानों का झुकाव धार्मिक शिक्षा की ओर है, एक मिथक और रूढ़िवादिता है। इसका सामाजिक-आर्थिक और वर्ग-पहचान प्रभाव है जिसे मुसलमानों की शिक्षा का विश्लेषण करते समय अक्सर नजरअंदाज कर दिया जाता है। 70 के दशक में इस तरह के मिथक और रूढ़िवादिता को और भी बल मिला क्योंकि अरब में हुई तेल क्रांति के परिणामस्वरूप उत्तरी, पश्चिमी और मध्य भारत में पूर्वी एशियाई देशों के वित्त पोषण से कई मदरसे खोले गए थे। अरब जगत ने आर्थिक रूप से गरीब मुसलमानों को उनकी धार्मिक शिक्षा के लिए मदद करना शुरू कर दिया था। इसने भारत के कई उलेमाओं को नए मदरसे शुरू करने और मौजूदा मदरसों का विस्तार करने के लिए वित्तीय सहायता जुटाने में मदद मिली थी।

References:

Ahmad I. (1981). Muslim educational backwardness: An inferential analysis, economic and political weekly September, p.1457-1465.

Ahmad, I. (1987), Educational development of Minorities in India, Journal of Educational Planning and Administration, NIEPA, New Delhi

Ahmad, I. (ed.) (1973). Caste and social stratification among the Muslims, Delhi: Manohar Publication

Alam, A. (2003). Democratization of Indian Muslims, Economic and Political Weekly, November, 38 (46), 4481-4885

Ali, A. (2001). Masawaat ki jung, pasemanzar: Bihar ka pasmanda Musalman, New Delhi: Vani Prakashan (in Hindi)

Ansari, Iqbal A. (1998). Federal nation building: Non regional dimensions of pluralism and representation of Muslims in elected body's: In A. R. Vijaypur, (eds.), (1998). Dimensions of federal nation building, New Delhi: Oxford p 211-233

Carens, Joseph H. & Willams, Melissa S. (1998). Muslim minorities in liberal democracies: The politics of misrecognition: In R. Bhargava (eds.) (1998). Secularism and its critics, Delhi: Oxford University Press.

Chauhan, C. P. S. (1990). Emerging priorities in Indian education, Education and Society, Vol 8, No. 1, James Nicholas

Daftery, F. (1995). The Isma'ilis: Their history and doctrines. Cambridge: Cambridge University Press

Desai, Z. (1984). Center of Islamic learning in India, Government of India: Publication Division

Edwards, John R. (1981). Psychological and linguistic aspects of Minority education in world yearbook of education 1981: In J. Megarry (et.al.). (eds.), (1981). Education of minorities, London: Kogan Page

Government of India: Constituent assembly debates (CAD), Vol. VIII p. 330

Government of India: Constituent assembly debates (CAD), Vol. VIII p 332

Government of India: Constituent assembly debates (CAD),Vol. X p 229-236

Hasan, F., (2006). Madaris and the challenges of modernity in colonial India: In J. Peter Hartung & H. Reifeld (eds.) (2006). Islamic education, diversity and national identity: Dini madaris in India Post 9/11, New Delhi: SAGE

Hasan, M. (1981). In search of integration and identity: Indian Muslims since independence, Economic and Political Weekly, November, p. 2467.

Hasan, M. (1981). In search of integration and identity: Indian Muslims since independence, Economic and Political Weekly, November.

Hasan, Z. & Menon, R., (2006). Unequal citizens: A study of Muslim women in India, New Delhi: Oxford University Press;

Kaur, K. (1985). Education in India (1781-1985): Policies, planning and implementation, Chandigarh: Centre for Research in Rural and Industrial Development

Khan, R. (1978). Minority segments in Indian polity: Muslim situation and plight of Urdu, economic and political weekly, Vol- XIII, no-35, September.

Kochhar, R. K. (1992), English education in India: Hindu anamnesis versus Muslim torpor, economic and political weekly, November, p. 2613.

Qadri, A. W. B. (eds.), (1998). Education & Muslims in India since Independence, Delhi: Institute of Objective Studies, p. 81.

Qasmi, Qari M. Tayyib, (1968). Dar-ul-ulum Deoband ki saw sala zindagi, Deoband: Dar-ul-ulum

Rao, B. Shiva. (1968). The framing of India's constitution: Selected documents, Vol. II, p. 411-422, New Delhi: Indian Institute of Public Administration.

Sikand, Y. (2003). The dalit Muslims and the all India backward Muslim morcha: Qalandar, http://www.islaminterfaith.org/sept2003/article.html

Wajahat, A. (2003). Bahrtiya musalman vartaman aur bhavishya, Hans, August

☆☆☆